रवीन्द्रनाथ टैगोर का काव्यात्मक चित्र संसार

डॉ० अर्चना रानी
विभागाध्यक्ष : ड्राइंग एवं पेण्टिंग विभाग,
रघुनाथ गर्ल्स पीजी कॉलिज, मेरठ

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की गणना भारत के अग्रणी आधुनिक चित्रकार के रुप में है। उन्होंने तत्कालीन कला नियमों एवं शैलियों से प्रथक् अपना मौलिक सृजन आरम्भ किया। उनका जीवन कला के विभिन्न रंगों से भरा सागर था। उन्होंने कवि रुप में तो प्रसिद्ध प्राप्त की, साथ ही साठ वर्ष की आयु पूर्ण होने पर चित्राकृतियाँ बनाकर उच्च सौन्दर्यानुभूति व्यक्त की। जीवन के सन्ध्याकाल में कवि ह्रदय की निराकार भावनाओं को उन्होंने रूपाकार देकर अन्तराल पर मूर्त कर दिया। अपनी कविता को लय बद्ध करने, सँवारने में काँट–छाँट करने से रुपाकार स्वतः उभरने लगे और यहीं से उनमें कलाकार उत्पन्न होने लगा। उन्नीस वर्ष (1880) की आयु में उन्होंने एक व्यक्ति चित्र बनाया था जिसे देख लगता है कि वह कुशल हाथों द्वारा बनाया गया है। ऐसा भी हो सकता है कि उनके सम्बन्धी ज्योतिन्द्रनाथ एक प्रतिशिठत कलाकार थे, सम्भवतः वह व्यक्ति चित्र उन्होंने सँवारा हों। व्यक्ति चित्र बनाने के बाद शायद ही उन्होंने अपनी कलम चित्र बनाने को चलाई हों। फिर एकाएक आयु के साठ के दर्शक में उनका कलाकार मन जागा और उन्होंने रेखा चित्र, रंग चित्र बनाने प्रारम्भ कर दिये। सन् 1928 से 1940 के मध्य तक उन्होंने लगभग ढाई हजार चित्र बनायें जो अनेक संग्रहालयों की शोभा हैं। लेकिन उनके अधिकांश चित्र शान्ति निकेतन कोलकाता के संग्रह में हैं। शान्ति निकेतन के समकालीन अनुयायियों के लिये वह 'पवित्र अवशेश' अथवा 'गोपनीय रहस्य' के समान है।

उन्होंने इस विषय में लिखा भी है–**"मेरी सुबह गीतों से भरी हुई थी, सूर्यास्त का समय रंग से भरने दो।"** उपरोक्त शब्दों में ही उनके जीवन का सार छिपा है। 7 मई 1861 को कोलकाता में जन्में बालक के विषय में कौन जानता था कि वह बड़ा होकर, 'गुरुदेव' कहलायेगा तथा साहित्यकार, कवि, संगीतकार, नाटककार, चित्रकार, समालोचक आदि विविध गुणों का अधिष्ठाता बनेगा। सन् 1928 से पूर्व तक रवीन्द्रनाथ भारत के सबसे सार्वजनिक व्यक्ति हो चले थे। घेराबन्द, साल–दर–साल सांस्कृतिक दूत और शान्तिनिकेतन के लिये धन–संग्राहक के रुप में देश–विदेश घूमते थे। जो समय उन्होंने अपने पुराने मित्र विल रॉथेन स्टाइन (तब वे रॉयल कॉलेज ऑफ आर्ट में प्रोफ़ेसर थे) से 1930 में एक पत्र में शिकायत की–

"मैं अपने मन में एक दुष्कर आशा पाले हूँ– इन घने गुँथे दिनों में जो मुझे बंदी बनाये हैं, कहीं पर जरा सा आराम पाने की और सभी आवश्यक दायित्वों से छूट निकलने की। मेरी नियति है मानवता के लिए निरंतर कल्याणकर बने रहना और किसी उद्देश्य में जुटे रहना। मेरे अंदर का कलाकार बराबर मुझे नटखट और सहज होने के लिए उकसाता रहता है लेकिन मैं जैसा सचमुच हूँ वैसा हो पाने के लिए बहुत से साहस की जरुरत है।

चित्रकार के रुप में टैगोर की विशेषता यह है कि उन्होंने अपनी कला को वस्तु में निहित अमूर्त भाव द्वारा सृजित किया है। कहीं–कहीं मूर्त वस्तु को भी अमूर्त रुप में चित्रित कर अपनी सुदृढ़ कलाभिव्यक्ति का परिचय दिया है। टैगोर ने अपने अमूर्त सौन्दर्य–चिन्तन को प्रकृति की काव्यात्मकता एवं रहस्यात्मकता के साथ शाब्दिक अभिव्यक्ति के रुप में तो प्रस्तुत किया ही है, किन्तु उसे अपनी स्वच्छन्द रेखाओं, रंगों द्वारा रुप देकर कविता का सा लयात्मक एवं काव्यात्मक रुप दिया है।

पश्चिमी विचारक लैंगर ने कहा भी है कि शिल्प और तकनीक के आधार पर भेद होते हुए भी सभी कलाओं में साम्य है। अपनी पुस्तक 'फीलिंग एण्ड फार्म' में उसने यह स्पष्ट किया है कि सभी कलाओं में एक ऐसी ठोस जमीन होती है जो सबमें तात्विक समानता को सूचित करती है। मनुष्य की अनुभूतियों में विभाजन नहीं देखा जा सकता, भले ही उसकी अभिव्यक्ति के विविध माध्यम क्यों न हो।

गुरुदेव रवीन्द्र कवि भी थे और चित्रकार भी। उन्होंने एक प्राकृतिक दृश्य–चित्र को देखा और उन्हें लगा कि इसे रुपायित करना चाहिए, पर किस विधा में? प्रश्न जटिल था। वहाँ उन्हें लगा कि इस दृश्य को कविता गहराई से सामने ला सकती है। इसके आगे का एक प्रसंग आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की पुस्तक 'लालित्य तत्व' के पृश्ठ 35–36 से सीधे उद्धत किया जा रहा है–

"कवीन्द्र रवीद्र ने झेलम के वक्र स्त्रोत्र को सन्ध्या की लाल आभा से अच्छादित होते हुए देखा। इसी समय हंस–जातीय पक्षियों की एक पंक्ति उड़ती चली आई। कवि ने पहले तो इसी मनोरम चित्र को देखा। उसने उसे ज्यों–का–त्यों आँकने का प्रयास किया। जो–जो बातें उसे ऐसे लगीं कि पाठक को मनाग्राह्य नहीं होंगी, उनके लिए उसने उपमानों का सहारा लिया और प्रयत्न किसया कि सौन्दर्य जैसा उसे दिख रहा है। वैसा ही पाठक को अवितथ रुप में

हृदयंगम हो जाए।' गुरुदेव टैगोर की उक्त कविता यह है–

'संध्या की लालिमा में झिलमिलाता हुआ
झेलम का यह बाँका स्त्रोत
अन्धकार में मलिन हो गया, मानों म्यान में ढकी हुई
बाँकी तलवार हो।
दिन के भाटे की समाप्ति के बाद आया रात का ज्वार
अपने काले जल में बहकर आते हुए नक्षत्र–पुरुशों को लिए
हुए,
अंधेरे में गिरि–तट की तलहटी में
कतार–के–कतार देवदारु वृक्ष (खड़े हैं)
ऐसा लगा कि सृश्टि मानो स्वप्न में
कुछ कहना चाहती है, (परन्तु)
स्पश्ट कह नहीं पा रहीं है, (और)
उस अव्यक्त ध्वनि का पुंज घुमड़ रहा है
उसके हृदय में।
अचानक सुनाई पड़ी उसी समय
सन्ध्या के आकाश में।
शब्द की विद्युत्छटा, भून्य के प्रान्तर में
क्षण–भर में फैल गई दूर से और भी दूर।'

इस प्रसंग में दो बातें एक साथ उठती हैं– एक ये–कि कुछ मनोभावों, दृश्य–चित्रों और अन्तर्द्वन्द्वों को बिना शब्द के सहारे अर्थात् कविता के बिना अभिव्यक्त करना सम्भव नहीं है। तथा दूसरा ये कि एक कला दूसरी कला के जन्म का कारण बनती है। उपर्युक्त प्राकृतिक चित्र पर चित्र भी बनता तो मनुश्य सृजित और कविता भी लिखी गई तो मनुष्य द्वारा। एक नैसर्गिक सौन्दर्य को वास्तवित स्वरुप में ले आने के कारण ही कलाकार एक तरह से पुनर्सर्जक कहलाता है।

प्रारम्भ में टैगोर ने अपनी कला का सृजन कविता में काट–छांट कर बीच–बीच में किये गये आड़ी तिरछी रेखाओं के सरल रेखांकन से किया है जो चित्रात्मक अक्षरों के रुप में है। इस प्रकार टैगोर की उच्च शाब्दिक अभिव्यक्ति उनकी उच्च संवेदनात्मकत अनुभूति व कल्पना शक्ति को अभिव्यक्त करने में सहायक है और उसी माध्यम से टैगोर ने अपने अमूर्त सौन्दर्य चिन्तन को विश्व के कोने–कोने में पहुँचा कर सभी को अपनी कला से आच्छादित किया है। धीरे–धीरे उन्होंने रेखाओं और रंगों से अपनी सौन्दर्यानुभूति को आकारों में बाँधना आरम्भ कर दिया, जो काव्यात्मक रुप में अपना स्वरुप ग्रहण करने लगे। ये आकार उनकी समृद्ध शब्दावली एवं शिल्पकौशल को व्यक्त करते हैं। इन आकारों में टैगोर ने कहीं उन भावनाओं का चित्ररुप में रुपान्तरण किया, जिन्हें शब्दों में व्यक्त नहीं किया हो और कहीं उन विचारों की पुनरावृत्ति चित्रों में की है जिन्हें उन्होंने काव्य रुप में भी प्रस्तुत किया है।

कवि रुप में भी टैगोर ने अपनी अनुभूति को चित्रकार की भाँति रंगों से सजाया है, जो उनकी 'कृति गीतांजलि' की इस कविता में दिखाई देती है। रचना की दृष्टि से निम्न पंक्तियों में उनके अन्दर का चित्रकार ही बोलता दिखाई देता है:

'मैं स्वयं को ही बड़ा बनाऊंगा
यही तो मेरी माया (इच्छा) है
तुम्हारे आकाश को रंग देने के लिए
रंगीन छाया डालूँगा।
तुम अपने 'अहं' को दूर रखकर,
उसे अनेक स्वरों में पुकारोगे
तुम्हारा अपना ही विरह मेरी नीली काया है।

इस प्रकार उनकी काव्य रचनाएँ चित्र की भांति प्रतीत होती हैं और चित्रों में काव्य का सा रुप देखा जा सकता है। उनकी चित्र रचनाओं में रंगों की लयात्मकता एवं तारतम्यता काव्य का सा आभास दिलाती है। अतः उनके चित्रों को काव्य से पृथक् नहीं किया जा सकता। टैगोर ने स्वयं की कलाकृतियों को काव्य की पंक्तियों के समान बताया है। (My Pictures are my Versifications in Lines)

कला समीक्षक एवं चित्रकार हेमन्त शेष ने रवीन्द्रनाथ टैगोर के विषय में लिखा है कि यद्यपि उन्होंने अनायास ही बिना किसी प्रयत्न व सोच–विचार के चित्र जगत में प्रवेश किया, किन्तु वे अपने काव्य में इतने डूबे हुए थे कि उनका चित्र जगत भी उनकी कवि–चेतना ज्ञान से अछूता नहीं रह सका। कवि रवीन्द्र कहीं भ्रमण पर हों या शान्ति निकेतन में, वह निरन्तर चित्र बनाते रहते। एक दिन में लगभग चार–पाँच चित्र बनाना उनकी दिनचर्या का अंग था। प्रारम्भ के उनके चित्रों में कविता या गद्य लेखन बहुत होता था पर जैसे–जैसे वह चित्र बनाते गये, चित्रों में लेखन स्थान कम होता गया और रंगों का महत्व बढ़ता गया। बहुदा वह साधारण ढंग के काले फाउण्टेन पेन से रेखाचित्र बनाते और बाद में ब्रुश या रंग में डूबे कपड़े पर रंगीन चित्र बनाने लगे। उनके चित्र आकार में छोटे ही होते थे, भायद ही उन्होंने दो फुट से बड़ा कोई चित्र बनाया हो। विषय–वस्तु की दृष्टि से उनके चित्रों में पेड़–पौधे पक्षी सर्प, काल्पनिक, पशु–पक्षी, मानव मुखमण्डल पूर्ण मानवाकृतियाँ तथा दृश्य चित्र आदि हैं। उनके चित्रों की सजृन शैली पेश्चमी चित्रकार पॉलक्ली तथा काण्डिन्स्की के सदृश हैं। उनके बनाये मुखमण्डलों तथा रेखाचित्रों में जो पेन इंक की विविध धारियाँ हैं, वह उनके चित्रों को ग्राफिक कला के निकट ले जाती हैं। वस्तुतः उनके चित्र उनकी सृजनात्मक क्रीड़ा के साक्ष्य हैं। बहुत कम लोग जानते हैं कि भारत में कला में आधुनिकता की भाुरुआत करने के कारण उन्हें 'आधुनिक कला का पिता' कहा जाता है। उनकी अनेक कृतियाँ ऐसी हैं जिन्हें पहचाना नहीं जा सकता फिर भी वह स्वीकृत की गई। वस्तुतः वास्तविक परिप्रेक्ष्य में, टैगोर के चित्र 'गौण' है, उनके हस्ताक्षर तो उनकी कवितायें हैं। उनके लिये चित्र छायाओं का खेल है। अगर हम टैगोर के चित्रों को ध्यानपूर्वक देखें तो पता चलता है कि अधिकांश चित्रों में एक नीरवता सी है। अधिकांश कृतियाँ गहरी तान में बनी हैं चेहरे अंधेरों में चित्रित लगते हैं तथा दृश्य चित्र भी रात के अंधेरे वाले मानव रहित बने हैं। वस्तुतः उनके चित्र एक एकान्तिक संवाद को आमन्त्रित करते प्रतीत होते हैं। संक्षेप में, उनके चित्रों में एक रहस्यात्मकता, फंतासी एवं आश्चर्य की गहन अनुभूति है। उनके मुखमण्डल विशयक चित्रों की आँखे हमें आकर्शित करती हैं पर अधर मौन दिखाई देते हैं। अपनी इसी अचेतन प्रेरणा के लिये टैगोर ने लिखा है कि मैं समझता था कि शब्दों के क्षेत्र से बाहर जाकर कलाभिव्यक्ति करने का पासपोर्ट मुझे नहीं मिल सकेगा। लेकिन जो कलाओं में समान रुप से समाविश्ट

है, उसके प्रति मेरे स्वाभाविक झुकाव और उसके उपयोग सम्बन्धी मेरे आभास के कारण मुझे ज्ञान हुआ कि कला के क्षेत्र में मात्र रेखायें और रंग कोई संदेश नहीं देते, चित्रों में ही उनका ध्वन्यात्मक अवतरण होता है। उनका अन्तिम उद्देश्य किसी बाह्य तथ्य या आन्तरिक कल्पना का चित्रण या प्रति लेखन नहीं होता, वरन् उनका अभीष्ट एक ऐसी अनुपातिक समग्रता का विकास होता है जो हमारे दृष्टिपात द्वारा हमारी कल्पना का स्पर्श करती है। इस प्रकार उनके चित्र मानवीय भावनाओं एवं चिन्तन का साकार रुप है। इस प्रकार टैगोर का चित्र सृजन का शुभारम्भ काव्य शब्दों की विकृति से हुआ जो आधुनिक कला की एक विशेषता रही। संक्षेप में, टैगोर की कृतियाँ चाहें वह प्रकृति दृश्य हों, पशु–पक्षी या मानवाकृति–सभी एक अज्ञात एवं कौतूहलपूर्ण भाव को व्यक्त करती दिखाई देती हैं। अनेक चित्र किसी अलौकिक जगत का प्रतिनिधित्व करते दिखाई पड़ते हैं। अनेक कला समीक्षक उनके चित्रों को आदिम कला तथा अतियथार्थवादी कला का रुपान्तरण मानते हैं।

अतियथार्थवादी प्रवृत्ति होने के साथ–साथ टैगोर के चित्रों में यथार्थ दर्शन भी होते हैं। उनकी बनाई मानवाकृतियाँ बैडोल होते हुए भी यथार्थवादी है। अंग–प्रत्यंग विकृत होते हुए भी नाटकीय नहीं है, नेत्र पूर्णतः स्वाभाविक बने हैं। वस्तुतः रवीन्द्र लौकिकता का भ्रमण करते हुए अनायास ही अलौकिक जगत में प्रवेश कर गये हैं। प्रसिद्ध सौन्दर्य शास्त्री, दार्शनीय शैलिंग का कथन भी हैं कि निराकार अनन्त को आकार में परिणित करना ही कला है। टैगोर ने स्वयं भी लिखा है कि "मनुश्य तो केवल आँखों से नहीं देखता, आँखों के पीछे उसका मन है। आँखे ठीक जो देख रहीं हैं, मन उसी का प्रतिबिम्बि मात्र देख रहा है, ऐसा नहीं होता।" असित कुमार हल्दार ने 'रुपदर्शिका' में उद्घृत भी किया है कि कला मनुश्य की कल्पना शक्ति का दर्पण है। उपरोक्त सभी का परिणाम था कि टैगोर की कला में लयात्मक आकृतियाँ, पशु–पक्षियों में विचित्र छाया–प्रकाश के प्रभावों को देखा जा सकता है। इस प्रकार रवीन्द्रनाथ की कृतियों में रंगों एवं रेखाओं की स्वतंत्रता कहीं–कहीं आकारों को सहज परिवर्तित कर देती है। उनके चित्रों में विभिन्न रंगों का प्रयोग नवीनता लिए हुए है। उन्होंने रंगों को समतल रुप में बड़े–बड़े तूलिका स्पर्शों द्वारा प्रयुक्त किया है। उनमें रंगों का सामन्जस्य कहीं तो काव्यात्मक संगति लिए हुए है तो कहीं विरोधी प्रभाव भी लिए है, जिससे उनके चित्रों के रुपाकारों में अलौकिकता दिखाई देती है। यही अलौकिकता उनकी आधुनिक कला का मुख्य तत्व है।

सार रुप में, टैगोर के जीवन को एक लम्बे आत्म–सृजन के रुप में देखा जा सकता है। भव्य श्वेत दाढ़ी और लम्बा कुर्ता धारण करने वाला बंगाली राज परिवार का राजा रवीन्द्रनाथ कवि, कथाकार, संगीतज्ञ, नाटककार, चित्रकार, समालोचक, दर्शन शास्त्री, सभी गुणों के सम्पन्न 'गुरुदेव' की उपाधि से जाने गये। जवाहर लाल नेहरु के शब्दों में रवीन्द्रनाथ भारत के एक महान मानवतावादी थे। उनके गीत 'जन–गण–मन' को भारतीय गणराज्य का राष्ट्रगीत घोषित किया गया।

सन्दर्भ सूची :–

- जगन्नाथ प्रसाद मिश्र – कृतित्व और व्यक्तित्व – रवीन्द्रनाथ ठाकुर।
- समकालीन कला, नई दिल्ली, सं0–13, नम्बर–1989
- र.वि. साखलकर – आधुनिक चित्रकला का इतिहास।
- असित कुमार हल्दार–रूपदर्शिका।
- हजारी प्रसाद द्विवेदी–रवीन्द्रनाथ की कवितायें।
- डॉ0 शिवनाथ–रवीन्द्रनाथ टैगोर के विवेचन की पीठिका।
- Chitrashlip 2 – Rabindranath Tagore, Visva-Bharti, 1951.
- Dr. Mulk Raj Anand- Poet Painter Rabindranath Tagore, New York, 1985.
- I. Clerk – Rabindranath Tagore as Artist, Bombay Art Society, Vol: 9.